वी. एम. जैन जे.के समक्ष

भारत संघ,-याचिकाकर्ता

बनाम

मेसर्स हरबंस सिंह तुली एंड संस,- प्रतीयार्थी

1996 का सी. आर. सं. 3944

11 जुलाई, 2000

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908- धारा 34- मध्यस्थता अधिनियम, *1940- धारा. 14, 17 और* 29- *मध्यस्थ* विभिन्न *दावों पर ठेकेदार को राशि प्रदान कर रहा है- विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णय को न्यायालय का नियम बनाना और निर्णय की गई मूल राशि पर भविष्य का ब्याज प्रदान करना- निष्पादन न्यायालय द्वारा अधिनिर्णय की गई मूल राशि के रूप में विचाराधीन लघु ब्याज की राशि पर ब्याज सहित अधिनिर्णय की गई राशि की* गणना *करना- क्या विचाराधीन लघु ब्याज की राशि पर भविष्य का ब्याज प्रदान किया जा सकता है और संलग्न मूल राशि में* शामिल *किया जा सकता है, निर्धारित किया गया, हाँ, - भारत संघ, विलंबित भुगतान के नुकसान/ मुआवजे के रूप में लंबित लघु ब्याज पर ब्याज का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है, जो निर्णय की गई मूल राशि का हिस्सा बन जाएगा- याचिका खारिज कर दी गई।*

अभिनिर्धारित किया गया कि याचिकाकर्ता-भारत संघ विचारधीन ब्याज(pendente lite interest) पर भी ब्याज का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है, जिसे नुकसानी या विलंबित भुगतान के मुआवजे के रूप में लिया जाएगा और इस तरह यह निर्णय की गई मूल राशि का भी हिस्सा बन जाएगा।

(पैरा 10)

इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि जहां तक अभिनिर्धारित मूल राशि में दावा संख्या 21 का संबंध है, इस राशि को अभिनिर्धारित मूल राशि में शामिल किया जाना था, यह देखते हुए कि यह वह राशि थी जो मध्यस्थ द्वारा ठेकेदार को 2 से 20 तक के दावों में शामिल वस्तुओं के अलावा अधिनिर्णय के तहत देय राशि के रूप में दी गई थी और इस प्रकार इस राशि को अभिनिर्धारित मूल राशि में शामिल किया जाना था।मामले के इस दृष्टिकोण में, ठेकेदार न केवल 2 से 20 के दावों के संबंध में बल्कि दावा संख्या 21 के संबंध में भी भविष्य के ब्याज का दावा करने का हकदार होगा।इसके अलावा, ठेकेदार दावा संख्या 1 के तहत ठेकेदार को दिए गए विचारधीन ब्याज पर भविष्य में ब्याज का दावा करने का भी हकदार होगा।

(पैरा 11)

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908- धारा 115- सरकार और *ठेकेदार के बीच अनुबंध- अनुबंध के तहत सरकार की ओर से सभी कार्रवाई करने के लिए सक्षम मुख्य अभियंता- चाहे किसी अन्य अधिकारी द्वारा दायर पुनरीक्षण याचिका अक्षम हो या अनधिकृत- नहीं।*

यह अभिनिर्धारित किया गया कि जहां तक पक्षों के बीच अनुबंध का संबंध है, इसमें कोई संदेह नहीं है कि मुख्य अभियंता उक्त अनुबंध के संबंध में सरकार की ओर से सभी कार्रवाई करने में योग्य होगा।हालाँकि, जहाँ तक दीवानी पुनरीक्षण दाखिल करने का संबंध है, उक्त अनुबंध में निर्धारित नियम और शर्तें यह निर्धारित करने के लिए प्रासंगिक नहीं होंगी कि भारत संघ की ओर से दीवानी पुनरीक्षण दाखिल करने के लिए कौन योग्य था।यदि विधि मंत्रालय ने एक अधिसूचना जारी की है और मुख्य अभियंताओं और कार्य सर्वेक्षणकर्ताओं आदि सहित विभिन्न एम. ई. एस. अधिकारियों को केंद्र सरकार द्वारा या उसके खिलाफ दीवानी अदालतों में मुकदमों में वाद पत्र और लिखित बयानों पर हस्ताक्षर करने और सत्यापित करने और किसी भी न्यायिक कार्यवाही के संबंध में सरकार के लिए कार्य करने के लिए अधिकृत किया है, तो यह नहीं कहा जा सकता है कि कार्य सर्वेक्षणकर्ता द्वारा दायर वर्तमान पुनरीक्षण याचिका अक्षम या अनधिकृत थी।

(पैरा 5)

याचिकाकर्ता की ओर *से वकील दीपाली पुरी*

एच. एस. *तुली, व्यक्तिगत रूप से प्रतिवादी।*

निर्णय

(1) यह निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित 12 सितंबर, 1996 के आदेश के खिलाफ एक पुनरीक्षण याचिका है, जिसमें निर्णय देनदार-याचिकाकर्ता-भारत संघ द्वारा दायर आपत्ति याचिका का निपटारा किया गया है।

(2) वर्तमान पुनरीक्षण याचिका के निर्णय के लिए जो तथ्य प्रासंगिक हैं, वे यह हैं कि एक ओर भारत संघ और दूसरी ओर मैसर्स हरबंस सिंह तुली और उनके बेटों, ठेकेदारों (इसके बाद ठेकेदार के रूप में संदर्भित) के बीच विवाद के संबंध में, मामला एकमात्र मध्यस्थ को भेजा गया था, जिन्होंने ठेकेदार के पक्ष में 18 अगस्त, 1989 को अपना निर्णय दिया था। इसके बाद ठेकेदार ने मध्यस्थता अधिनियम 1940 की धारा 14 और 17 के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसमें मध्यस्थ को संबंधित दस्तावेजों के साथ मूल फैसले को अदालत में दाखिल करने और फैसले को अदालत के नियम के रूप में लागू करने का निर्देश देने की मांग की गई।उक्त आवेदन की सूचना भारत संघ को दी गई थी, जिसने विभिन्न आधारों पर अधि निर्णय को चुनौती देते हुए 21 सितंबर, 1989 को आपत्ति याचिका दायर की थी।विभिन्न मुद्दों को तैयार किया गया। इसके बाद विद्वान विचारण न्यायालय ने - 17 सितंबर, 1990 के फैसले के तहत 18 अगस्त 1989 के अधि निर्णय को अदालत के नियम के रूप में घोषित कर दिया, पर दावा संख्या 1 को छोड़कर जिसने 15 जून 1989 से 18 अगस्त 1989 तक 15% की दर से विचारधीन ब्याज दिया था।यह भी निर्देश दिया गया कि ठेकेदार मूल राशि पर 15 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से भविष्य में ब्याज का भी हकदार होगा।17 सितंबर, 1990 के इस फैसले और डिक्री के खिलाफ दायर अपील को जिला न्यायाधीश, चंडीगढ़ ने 31 *मार्च,* 1999 के फैसले और डिक्री के माध्यम से

बरकरार रखा था।इस बीच मामला *मेसर्स हरबंस सिंह तुली एंड संस बिल्डर्स (पी)* लिमिटेड *बनामभारत संघ (कुछ* निष्पादन कार्यवाही से उत्पन्न) विशेष अनुमति याचिका (सिविल) नंबर. 1995 की8791 से उच्च न्यायालय के उनके आधिपत्य के पास चला गया था। 4 अगस्त, 1995 के आदेश के माध्यम से, उनके लॉर्डशिप्स द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अपीलार्थी मेसर्स हरबंस सिंह तुली एंड संस डिक्री के निष्पादन में 5 अप्रैल, 1973 से 15 जून, 1989 तक की अवधि के लिए ब्याज की वसूली करने का हकदार होगा, क्योंकि इस अवधि के लिए ब्याज अनुदान 17 अप्रैल, 1990 के फैसले में कहीं भी रद्द नहीं किया गया था।निष्पादन याचिका के लंबित रहने के दौरान, निचली अदालत द्वारा पारित 17 सितंबर, 1990 के फैसले और डिक्री के निष्पादन के लिए, भारत संघ (निर्णय देनदार) ने डिक्रीटल राशि की गणना के संबंध में आपत्ति याचिका दायर की।आपत्ति याचिका को ठेकेदार (डिक्री धारक) ने अपनी गणना देते हुए लिखित उत्तर दाखिल करके चुनौती दी थी।विद्वत निष्पादन न्यायालय ने दोनों पक्षों को सुनने के बाद 12 सितंबर, 1996 के आदेश के माध्यम से भारत संघ की आपत्तियों का निपटारा करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि मध्यस्थ के निर्णय में विभिन्न दावों पर अधिनिर्णय की गई राशि मध्यस्थता कार्यवाही के समक्ष देय ब्याज सहित निर्णय की गई प्रमुख राशि बन जाएगी, जिसका अर्थ है कि उपार्जित ब्याज भी निर्णय की गई मूल राशि का हिस्सा बन जाएगा।देय राशि की गणना करने के तरीके के संबंध में निर्णय देने के बाद, विद्वत निष्पादन न्यायालय भी देय राशि की गणना करने के लिए आगे बढ़ा और आगे आदेश दिया कि निष्पादन आवेदन को 12 सितंबर, 1996 के आदेश के अनुसार आंशिक रूप से संतुष्ट के रूप में दायर किया जाए।निष्पादन न्यायालय के इस आदेश के खिलाफ, भारत संघ (निर्णय देनदार) ने इस न्यायालय में वर्तमान पुनरीक्षण याचिका दायर की।

(3) मैंने याचिकाकर्ता भारत संघ के विद्वान वकील-और प्रतिवादी कंपनी के प्रबंध निदेशक श्री एच. एस. तुली को व्यक्तिगत रूप से सुना है और रिकॉर्ड को ध्यान से देखा है।यहां तक कि निष्पादन न्यायालय के रिकॉर्ड को भी तलब किया गया था और मैंने इसका भी अवलोकन कर लिया है।

(4) शुरुआत में प्रतिवादी श्री एच. एस. तुली ने व्यक्तिगत रूप से प्रारंभिक आपत्ति जताई कि पुनरीक्षण याचिका अप्रमाणित थी क्योंकि यह किसी योग्य व्यक्ति द्वारा दायर नहीं की गई थी, क्योंकि अनुबंध के तहत केवल मुख्य अभियंता ही सरकार की ओर से उक्त अनुबंध के संबंध में सभी कार्रवाई लेने में सक्षम था। जबकि वर्तमान पुनरीक्षण याचिका सी. डब्ल्यू. ई., चंडी मंदिर के मुख्यालय में कार्य सर्वेक्षक द्वारा दायर की गई थी, जो भारत संघ की ओर से पुनरीक्षण याचिका दायर करने के लिए योग्य नहीं थे। मेसर्स रोशन लाई सेठी बनाम *मुख्य सचिव और अन्य (1)*पर भरोसा किया गया। ।दूसरी ओर, याचिकाकर्ता-भारत संघ की ओर से पेश विद्वान वकील ने मेरे समक्ष प्रस्तुत किया कि कानून मंत्रालय की अधिसूचना के अनुसार, समय-समय पर संशोधित, विभिन्न एम. ई. एस. अधिकारी केंद्र सरकार द्वारा या उसके खिलाफ दीवानी अदालतों में मुकदमों में वाद पत्र और लिखित बयानों पर हस्ताक्षर करने और सत्यापित करने और किसी भी न्यायिक कार्यवाही के संबंध में सरकार के लिए कार्य करने में योग्य थे।उन्होंने आगे कहा कि मुख्य अभियंताओं और अन्य लोगों के अलावा कार्य सर्वेक्षक उन एम. ई. एस.

(1) A.I.P-1971 जम्मू और कश्मीर 91

अधिकारियों में से थे जो वाद पत्र और लिखित बयानों आदि पर हस्ताक्षर करने और सत्यापित करने में योग्य थे। यह प्रस्तुत किया गया था कि विधि मंत्रालय की उक्त अधिसूचना को देखते हुए, यह नहीं कहा जा सकता है कि सर्वेयर ऑफ वर्क्स द्वारा दायर वर्तमान पुनरीक्षण याचिका सक्षम या अनधिकृत नहीं थी।

(5) दोनों पक्षों को सुनने के बाद, उनकी राय है कि प्रत्यर्थी की ओर से उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति गलत है।जहाँ तक पक्षों के बीच अनुबंध की बात है, इसमें कोई संदेह नहीं है कि मुख्य अभियंता उक्त अनुबंध के संबंध में सरकार की ओर से सभी कार्रवाई करने में सक्षम होगा।हालाँकि, जहाँ तक दीवानी पुनरीक्षण दाखिल करने का संबंध है, उक्त अनुबंध में निर्धारित नियम और शर्तें यह निर्धारित करने के लिए प्रासंगिक नहीं होंगी कि भारत संघ की ओर से दीवानी पुनरीण दाखिल करने के लिए कौन सक्षम था।यदि विधि मंत्रालय ने एक अधिसूचना जारी की है और मुख्य अभियंताओं और कार्य सर्वेक्षणकर्ताओं आदि सहित विभिन्न एम. ई. एस. अधिकारियों को केंद्र सरकार द्वारा या उसके खिलाफ दीवानी अदालतों में मुकदमों में आधार और लिखित बयानों पर हस्ताक्षर करने और सत्यापित करने और किसी भी न्यायिक कार्यवाही के संबंध में सरकार के लिए कार्य करने के लिए अधिकृत किया है, तो यह नहीं कहा जा सकता है कि कार्य सर्वेक्षणकर्ता द्वारा दायर वर्तमान पुनरीक्षण याचिका अक्षम या अनधिकृत थी।प्रत्यर्थी द्वारा जिस प्राधिकरण ए. आई. आर. 1971 जम्मू और कश्मीर 91 (ऊपर) पर भरोसा किया गया था, उसका वर्तमान मामले में कोई अनुप्रयोग नहीं होगा।रिपोर्ट किए गए मामले में, पट्टे को एक अधिकारी द्वारा समाप्त कर दिया गया था, जिसके पास समझौते के तहत ऐसा करने की कोई शक्ति नहीं थी और उन परिस्थितियों में ही जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि अधिकारी ने इस मुद्दे पर राय व्यक्त करके पूरे मामले का पूर्व निर्णय लिया था और इस प्रकार उसे उस पट्टे के तहत उत्पन्न विवाद में मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए अयोग्य घोषित कर दिया गया था।इस प्रकार, जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय द्वारा इस प्राधिकरण में निर्धारित कानून का मेरे समक्ष इस मुद्दे पर कोई अनुप्रयोग नहीं होगा।इस प्रकार,

प्रत्यर्थी द्वारा उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति बिना किसी योग्यता के है और इस तरह से खारिज कर दी जाती है।

(6)गुण-दोष पर आते हुए, याचिकाकर्ता भारत संघ की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने मेरे समक्ष प्रस्तुत किया कि 18 अगस्त, 1989 के अधिनिर्णय के अनुसार, भारत संघ ठेकेदार को 15 अप्रैल, 1973 से 15 जून, 1978 तक दी गई कुछ राशियों पर 15 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से साधारण ब्याज का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी था और दावा सं. मध्यस्थ द्वारा दिए गए 2 से 20 रुपये तक होंगे। 2, 19, 891.34 जबकि दावा संख्या के तहत कुल राशि। 21 रुपये में आएगा। 4, 74, 437.55 वृद्धि की ओर।यह प्रस्तुत किया गया था कि निचली अदालत द्वारा पारित 17 सितंबर, 1990 के फैसले और डिक्री के माध्यम से (और अपील में जिला न्यायाधीश द्वारा बरकरार रखे जाने के बावजूद), ठेकेदार (डिक्री धारक) निर्णय की गई मूल राशि पर प्रति वर्ष 15 प्रतिशत की दर से भविष्य में ब्याज का हकदार है और यह कि मध्यस्थ द्वारा दिए गए दावे संख्या 2 से 20 के तहत कुल राशि 2,19,891.34 रुपये होगी, जबकि दावा संख्या 21 के तहत वृद्धि की ओर
कुल राशि 4,74,437.55 रुपये होगी। यह प्रस्तुत किया गया था कि ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित निर्णय और डिक्री दिनांक 17 सितंबर, 1990 के तहत (और इस बीच अपील में जिला न्यायाधीश द्वारा बरकरार रखा गया) ठेकेदार (डिक्री धारक) निर्णीत की गई मूलधन राशि पर

प्रति वर्ष 15% की दर से भविष्य में ब्याज का हकदार है। आगे यह प्रस्तुत किया गया कि केवल 2,19,891.34 रुपये की राशि ही मूल राशि होगी क्योंकि यह दावा संख्या नंबर 2 से 20 के संबंध में प्रदान की गई थी। जबकि 4,74,437.55 रुपये की राशि वृद्धि की ओर दावा नंबर 21 के लिए और ऐसा होने पर, भविष्य में ब्याज केवल आंकी गई
मूल राशि रूपये 2,19,891.34 पर ही होगा।यह प्रस्तुत किया गया कि किसी भी स्थिति में, भविष्य का ब्याज जो दावा 2 से 21 संख्या की कुल राशि जो कि 6,94,328.89 (रु.2,19,891.34+रु. 4,74,437.55) है पर ही दय होगा ।

और किसी भी स्थिति में 5 अप्रैल 1973 से 15 जून 1989 की अवधि के लिए दावा संख्या 1 के तहत ठेकेदार को दिए गए पेंडेंट लाइट ब्याज की राशि पर अतिरिक्त ब्याज देय नहीं होगा क्योंकि ठेकेदार को दिए गए विचाराधीन ब्याज की राशि "निर्णयित मूलधन" शब्द में शामिल नहीं की जा सकती है।

मेहर चंद बनाम तुलसी राम (2) *मेसर्स आंध्र* सिविल *कंस्ट्रक्शन कंपनी,* हैदराबाद *बनाम उड़ीसा राज्य और अन्य (3)* और *कार्यकारी अभियंता, ग्रामीण इंजीनियरिंग प्रभाग,* ढेंकनाल बनाम *विश्वनाथ आगर*वाल *(4) पर भरोसा* किया *गया ।*

(7)दूसरी ओर, प्रत्यर्थी श्री एच. एस. तुली ने व्यक्तिगत रूप से मेरे समक्ष प्रस्तुत किया कि 15 जनवरी, 1992 की पहली आपत्ति याचिका में, भारत संघ द्वारा ही यह स्वीकार किया गया था कि मूल राशि रु। 6, 96, 328.89 और रु. 2000 संदर्भ लागत के लिए।यह प्रस्तुत किया गया था कि अब भारत संघ को यह आग्रह करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है कि वृद्धि राशि को मूल राशि में शामिल नहीं किया जाएगा।यह आगे प्रस्तुत किया गया कि इससे पहले जब भारत संघ की संपत्ति के संबंध में कुर्की आदेश पारित किया गया था, तो भारत संघ द्वारा कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई थी और अब भारत संघ को निष्पादन न्यायालय द्वारा गणना की गई डिक्रीटल राशि की गणना को चुनौती देने से रोक दिया गया था।गेंदा लाल बनाम हजारी *लाल (5)* मोहनलाल *गोयनका बनाम* बिनॉय *किशना मुखर्जी* और *अन्य, (6) रॉकी टायर्स बनाम* अजीत *जैन (7)* जगन्नाथ *रामानुज राज* देब *बनाम श्री लक्ष्मी नारायण* त्रिपाठी *और अन्य (8) और बैजनाथ प्रसाद* बनाम *रामफल (9) पर* भरोसा *रखा* गया था। आगे यह प्रस्तुत किया गया कि

(2) 1996(2) पी. एल. आर. 398 (पी एंड एच)
(3) ए. आई. आर. 1981 उड़ीसा 32
(4) ए. आई. आर. 1982 उड़ीसा 263
(5) ए. आई. आर. 1936 इलाहाबाद 21 (एफ. बी.)
(6) ए. आई. आर. 1953 एस. सी. 65
(7) 1998(3) पी. एल. आर. 53
(8) ए. आई. आर. 1960 उड़ीसा 197
(9) ए. आई. आर. 1962 पटना 72 (एफ. बी.)

चूंकि ब्याज अधिनियम के प्रावधान वर्तमान मामले पर लागू नहीं थे, इसलिए डिक्री धारक विचाराधीन ब्याज पर भी ब्याज का दावा करने का हकदार था, यह मानते हुए कि यह विलंबित भुगतान के लिए नुक़सान या मुआवजा था और न्यायनिर्णित मूल राशि का हिस्सा बनेगा ।

तेल और प्राकृतिक गैस आयोग बनाम एमसी क्लेलैंड इंजीनियर्स एस. ए. (10) जुगल किशोर प्रभातीलाल शर्मा और अन्य बनाम विजयेंद्र प्रभातीलाल शर्मा और अन्य(11) उड़ीसा राज्य बनाम बी. के. रौत्रे (12)पर भरोसा किया गया। ।यह आगे प्रस्तुत किया गया कि भारत संघ द्वारा दायर दूसरी आपत्ति याचिका विचारणीय नहीं होगी। आर. पी. ए. वेलियाअमल *बनाम* पी. *पलानीचामी नादर और अन्य* (13)पर भरोसा किया गया।

(8) इस पर विचार करने के बाद और पूरे रिकॉर्ड को देखने के बाद, मेरी राय में, भारत संघ (निर्णीत ऋणी) ठेकेदार (डिक्री धारक) को न केवल मद 2 से 20 और मद संख्या 21 के तहत राशि पर बल्कि मद संख्या 1 पर भी आगे ब्याज का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा, जो विचारधीन ब्याज के लिए ठेकेदार को दी गई राशि थी।1999 (4) एस. सी. सी. 327 (ऊपर) में, यह सर्वोच्च न्यायालय के उनके अधिपतियों द्वारा निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया थाः—

> "4. इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि मध्यस्थों के पास सी. पी. सी. की धारा 34 के समान ब्याज देने की शक्तियां हैं जो मध्यस्थता अधिनियम, 1940 की धारा 29 के मद्देनज़र अदालत की शक्ति है।यह स्पष्ट है कि ब्याज दिए गए ब्याज पर नहीं बल्कि किए गए दावे पर दिया जाता है।कार्यवाही में किया गया दावा दो शीर्षों के तहत है-एक चालान और 10 फरवरी, 1981 के पत्र के तहत दावा की गई राशि का संतुलन और अपीलार्थी द्वारा प्रमाणित और भुगतान की गई राशि और दूसरा विलंबित भुगतान पर ब्याज है।इस तरह से
>
> > विलंबित भुगतान पर ब्याज का दावा मध्यस्थों के समक्ष दावा दायर किए जाने तक स्पष्ट हो गया था।इसलिए, मध्यस्थों की ब्याज की राशि पर ब्याज देने की शक्ति, जिसे दूसरे शब्दों में, नुकसान पर ब्याज या विलंबित भुगतान के लिए मुआवजा कहा जा सकता है, जो मूलधन का भी हिस्सा बन जाएगा।यदि कानून में यह सही स्थिति है, तो हमें नहीं लगता कि ब्याज अधिनियम की धारा 3 की उस मामले के संदर्भ में कोई प्रासंगिकता है, जिससे हम वर्तमान मामले में निपट रहे हैं।

(9) (1993) 1 एस. सी. सी. 114 (ऊपर) में उच्चतम न्यायालय के उनके अधिपतियों द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ब्याज की दर के संबंध में या ब्याज जोड़ने के संबंध में ब्याज के प्रश्न पर अधिनिर्णय को संशोधित करने का कोई कारण नहीं था, जो कि आवेदकों को देय मूल राशि के रूप में निर्धारित की गई थी, जो कि धारा 34 सी. पी. सी. के तहत अनुमेय है। (1999) 2 एस. सी. सी. 58 (उपर्युक्त) में, उच्चतम न्यायालय के उनके अधिपतियों द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि 19 अगस्त 1981 को अधिनियम के प्रारंभ होने से पहले लंबित मध्यस्थता कार्यवाही सहित कानूनी कार्यवाही पर लागू नहीं होगा।

(10) 1999 (4) एस. सी. सी. 327 (उपर्युक्त) में उच्चतम न्यायालय के उनके अधिपत्य द्वारा निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि मध्यस्थ को ब्याज की राशि पर ब्याज देने की शक्ति है, जिसे हर्जाने पर ब्याज या विलंबित भुगतानों के लिए मुआवजा कहा जा सकता है, जो निर्णय की गई मूल राशि का भी हिस्सा बन जाएगी, मेरी राय में, याचिकाकर्ता-भारत संघ विचाराधीन लघु ब्याज पर भी ब्याज का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी था, जिसे हर्जाने या विलंबित भुगतान के मुआवजे के रूप में लिया जाएगा और

(10) 1999 (4) एस. सी. सी. 327
(11) 1993(1) एससीसी 114
(12) (1999) 2 एससीसी 58
(13) (1997) 10 एससीसी 209

इस तरह यह निर्णय की गई मूल राशि का भी हिस्सा बन जाएगा।मामले के इस दृष्टिकोण में, प्राधिकरण, 1996 (2) पी. एल. आर. 398 (पी. एंड. एच.), ए. आई. आर. 1981 उड़ीसा 32 और ए. आई. आर. 1982 उड़ीसा 263 (ऊपर) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा भरोसा किया गया, याचिकाकर्ता-भारत संघ के लिए कोई मदद नहीं होगी, और न ही इन प्राधिकरणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 1999 (4) एससीसी 327 (सुप्रा)
में सर्वोच्च न्यायालय के उनके आधिपत्य द्वारा निर्धारित कानून के मद्देनजर, विचाराधीन ब्याज को भविष्य के ब्याज देने के उद्देश्य से तय की गई मूल राशि में शामिल नहीं किया जा सकता है।

(11)जहाँ तक निर्णय की गई मूल राशि में दावा संख्या 21 का संबंध है, मेरी राय में, इस राशि को निर्णय की गई मूल राशि में शामिल किया जाना था क्योंकि यह वह राशि थी जो मध्यस्थ द्वारा ठेकेदार को 2 से 20 तक के दावों में शामिल वस्तुओं के अलावा अधिनिर्णय के तहत देय राशि के रूप में दी गई थी और इस प्रकार इस राशि को निर्णय की गई मूल राशि में शामिल किया जाना था।मामले के इस दृष्टिकोण में, ठेकेदार न केवल 2 से 20 के दावों के संबंध में बल्कि दावा संख्या 21 के संबंध में भी भविष्य के ब्याज का दावा करने का हकदार होगा।
इसके अलावा, ठेकेदार दावा संख्या 1 के तहत ठेकेदार को दिए गए *विचाराधीन लघु ब्याज* पर भविष्य के ब्याज का दावा करने का भी हकदार होगा।

(12)उपरोक्त अभिलिखित कारणों के लिए, मेरी राय में, निष्पादन न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में सही था कि निर्णय की गई मूल राशि में न केवल 2 से 20 और 21 के दावे शामिल होंगे, बल्कि दावा संख्या 1 भी शामिल होगा।तदनुसार, वर्तमान पुनरीक्षण याचिका में कोई योग्यता नहीं पाते हुए, इसे खारिज कर दिया जाता है, लेकिन लागत के बारे में कोई आदेश नहीं दिया जाता है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

सुखवीर कौर
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)
हिसार, हरियाणा